भारत में किसानों का कम्यून : 24वाँ न्यूज़लेटर (2021)

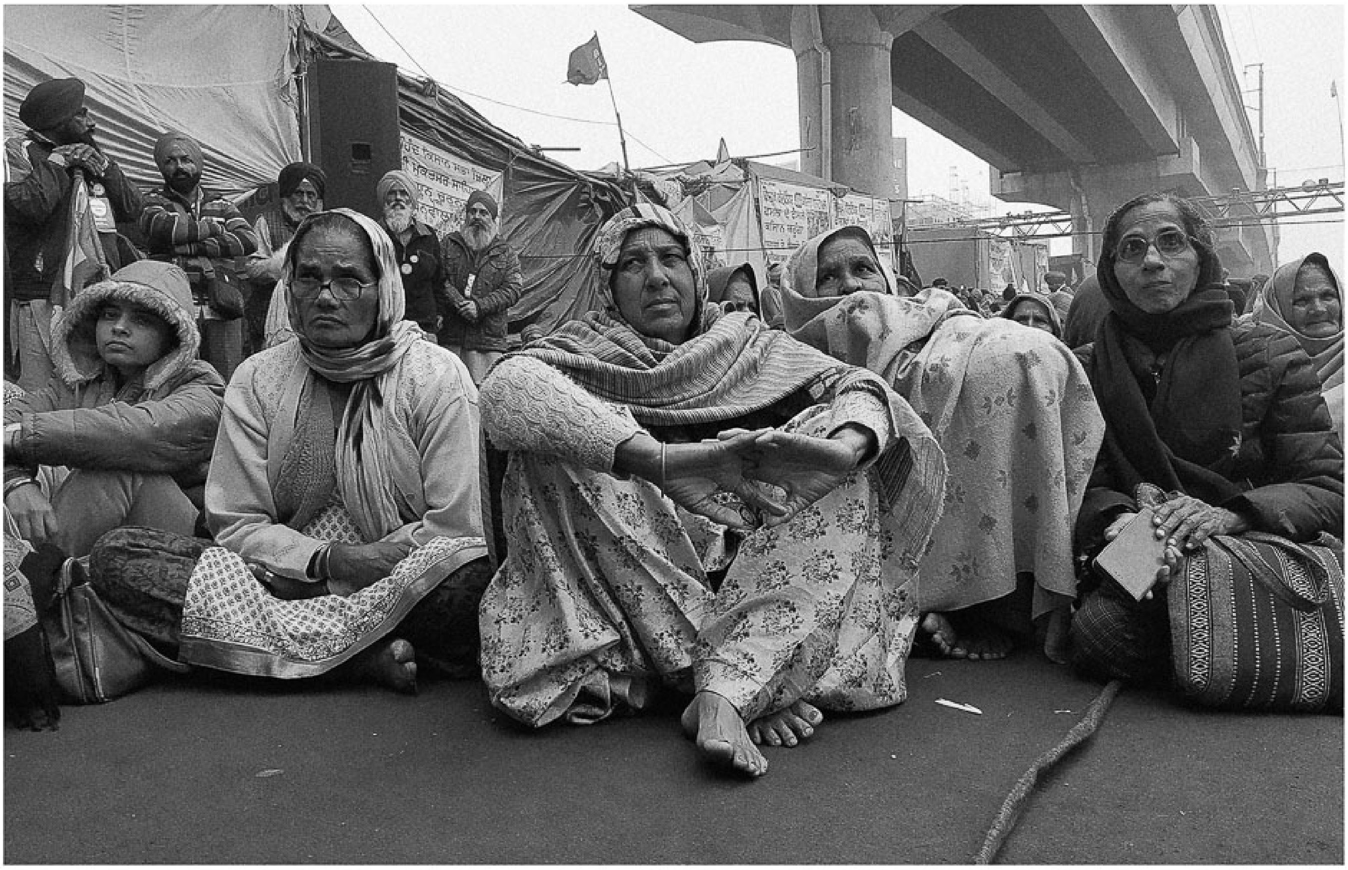

दिल्ली में टिकरी बॉर्डर पर प्रदर्शन करती हुईं पंजाब और हरियाणा की महिलाएँ, 24 जनवरी, 2021.

प्यारे दोस्तों,

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन।

26 जून 2021 को भारत के अट्ठाईस राज्यों के सरकारी दफ़्तरों के सामने हज़ारों किसान प्रदर्शन के लिए इकट्ठे होंगे। उस दिन प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी की दक्षिणपंथी सरकार के ख़िलाफ़ किसानों के राष्ट्रव्यापी विरोध के सात महीने पूरे हो जाएँगे। यह प्रदर्शन 26 नवंबर, 2020 को पूरे देश में 25 करोड़ मज़दूरों और किसानों के द्वारा की गई एक दिन की आम हड़ताल से शुरू हुए सिलसिलेवार विरोध प्रदर्शनों का एक हिस्सा है। नवंबर के बाद से हज़ारों किसान देश की राजधानी दिल्ली के बॉर्डरों पर किसान कम्यून बनाकर रह रहे हैं, **पेरिस कम्यून** बनने के ठीक 150 साल बाद। मार्क्स ने जिसके बारे में **लिखा** था कि पेरिस कम्यून की पराजय से समाजवादी लोकतंत्र का नया प्रयोग उभरेगा। वेनेज़ुएला के कोमुनास तथा

दक्षिण अफ़्रीका के भूमि दख़ल की तरह ही किसान कम्यून भी एक प्रयोग है।

किसानों ने कड़ाके की ठंड को भी मात दे दी। अक्टूबर 2020 में भारतीय कृषि को चंद बड़े कॉर्पोरेट घरानों के हवाले करने वाले तीन क़ानून पास हुए थे; किसान इन्हीं क़ानूनों का विरोध कर रहे हैं। चालीस से अधिक किसान और खेत मज़दूर यूनियनों से मिलकर बने संयुक्त किसान मोर्चा ने 26 जून के विरोध प्रदर्शन का आह्वान किया है। उनका नारा होगा 'खेती बचाओ, लोकतंत्र बचाओ'। ये नारा उनके पूरे संघर्ष का सार है।

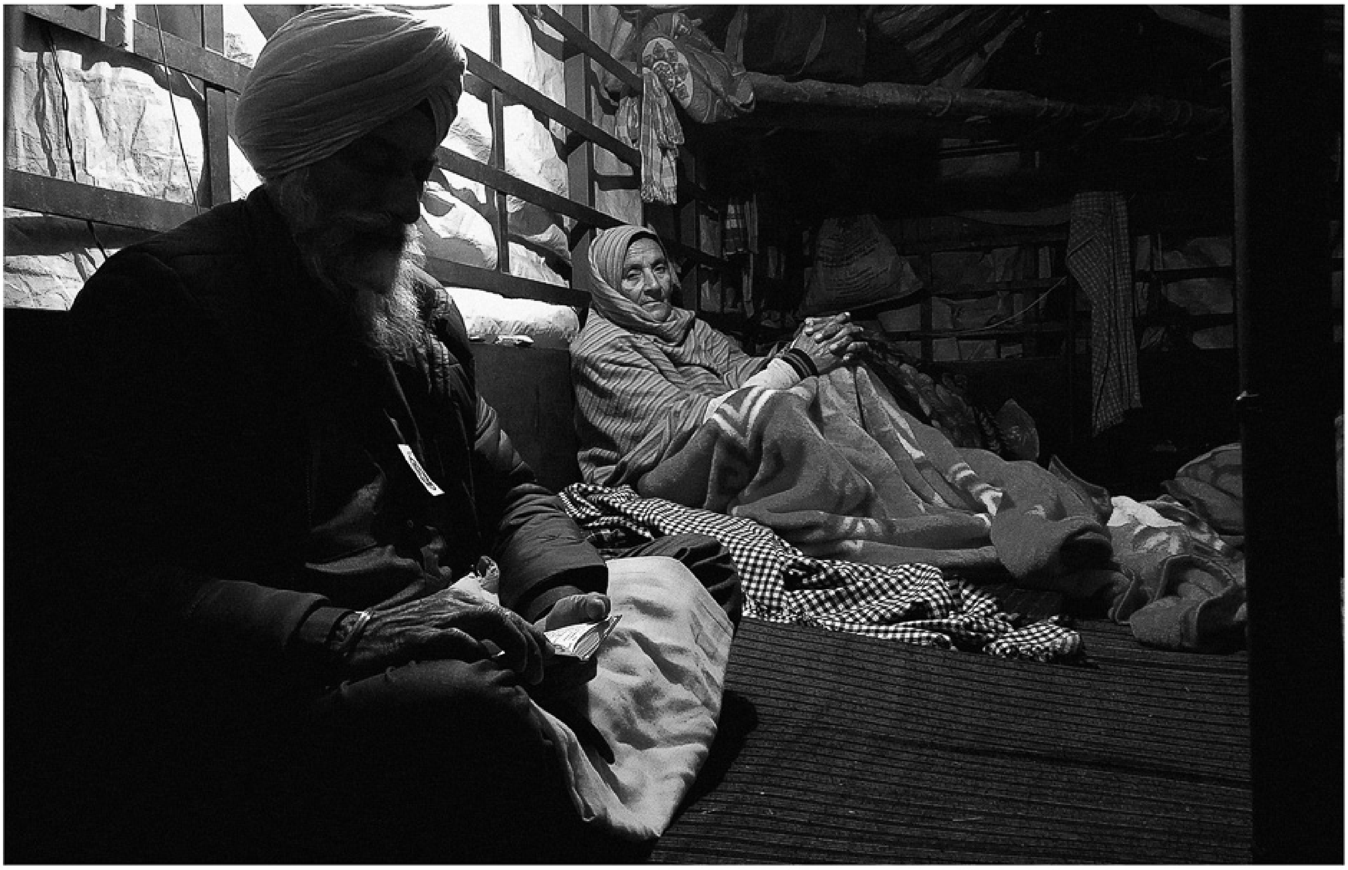

दिल्ली में सिंघु बॉर्डर पर अपनी ट्रॉली में सर्दी की रात गुज़ारते किसान दम्पति, 28 दिसंबर, 2020.

मोदी सरकार द्वारा उन क़ानूनों को पास करने के साथ ही किसान और खेत मज़दूर समझ गए थे कि अब मंडियाँ कॉरपोरेट घरानों के हिसाब से चलेंगी; क्योंकि इन क़ानूनों ने राज्य के हस्तक्षेप को कमज़ोर कर मोदी और उनकी पार्टी के साथ घनिष्ठ संबंध रखने वाली कंपनियों के हाथों में मूल्य निर्धारित करने वाले तंत्र को सौंप दिया था। कृषि-जीवन का अस्तित्व दाँव पर है। ये कोई बढ़ा-चढ़ाकर कही जा रही बात नहीं है। किसान नवउदारवादी नीति के प्रभाव को जानते हैं। 1991 के बाद से, जब भारत में कृषि सहित आर्थिक जीवन के सभी पहलुओं में ऐसी नीतियाँ अपनाई जानी शुरू हुईं, तब से **तीन लाख** से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं। यह विरोध प्रदर्शन, किसानों का यह कम्यून, आत्महत्या के ख़िलाफ़ उनकी चिंघाड़ है।

2011 की **जनगणना** के अनुसार, 120 करोड़ की कुल आबादी में से 83.3 करोड़ लोग ग्रामीण भारत में रहते हैं; इसका मतलब है कि तीन में से दो भारतीय ग्रामीण इलाक़ों में रहते हैं। ये सभी किसान या खेतिहर मज़दूर नहीं हैं, लेकिन फिर भी ये सभी लोग किसी-न-किसी तरह से ग्रामीण अर्थव्यवस्था से जुड़े हुए हैं। ये लोग कारीगर, बुनकर, वन मज़दूर, बढ़ई, खनिक या औद्योगिक मज़दूर हैं। स्थायी और स्वस्थ कृषि अर्थव्यवस्था पर टिकी हुई एक संपूर्ण सामाजिक दुनिया ख़त्म होने की कगार पर है। किसान ये जानते हैं। वे जानते हैं कि पूँजीवादी हमला भारत के ग्रामीण मज़दूरों के अस्तित्व और

भारत की बढ़ती शहरी आबादी को खिलाने की उनकी क्षमता को नष्ट कर देगा।

जीटी करनाल रोड पर एक ट्रैक्टर जत्था जो बैरिकेड्स को तोड़कर दिल्ली में दाख़िल हुआ, जिसके बाद प्रदर्शनकारियों तथा दिल्ली पुलिस के बीच झड़प शुरू हुई, 26 जनवरी, 2021.

अपने विरोध के दो महीने पूरे होने पर किसानों ने दिल्ली के अंदर ट्रैक्टर रैली का आयोजन किया। इस रैली के लिए उन्होंने 26 जनवरी, गणतंत्र दिवस का दिन चुना, वो दिन जब 1950 में नये भारत ने अपना संविधान अपनाया था। 2 लाख ट्रैक्टरों, और कुछ घोड़ों पर बैठकर या पैदल चलकर किसान राजधानी के बीचों-बीच पहुँचे। सरकार ने किसानों पर आतंकवादी होने का आरोप लगाया, और पुलिस ने प्रमुख राजमार्गों पर बैरिकेड्स लगाकर उन्हें रोकने की कोशिश की। जनता को खिलाने वालों और जनता का खाने वालों के बीच के इस टकराव के बारे में सोचते हुए ही 1971 में कवि साहिर लुधियानवी ने 26 जनवरी के बारे में लिखा था।:

देखे थे हम ने जो वो हसीं ख़्वाब क्या हुए

दौलत बढ़ी तो मुल्क में अफ़्लास क्यूँ बढ़ा

ख़ुशहाली-ए-अवाम के अस्बाब क्या हुए

जो अपने साथ-साथ चले कू-ए-दार तक

वो दोस्त वो रफ़ीक़ वो अहबाब क्या हुए

…

हर कूचा शोला-ज़ार है हर शहर क़त्लगाह

यकजहती-ए-हयात के आदाब क्या हुए

सहरा-ए-तीरगी में भटकती है ज़िंदगी

उभरे थे जो उफ़ुक़ पे वो महताब क्या हुए

मुजरिम हूँ मैं अगर तो गुनहगार तुम भी हो

ऐ रहबरना-ए-क़ौम ख़ताकार तुम भी हो

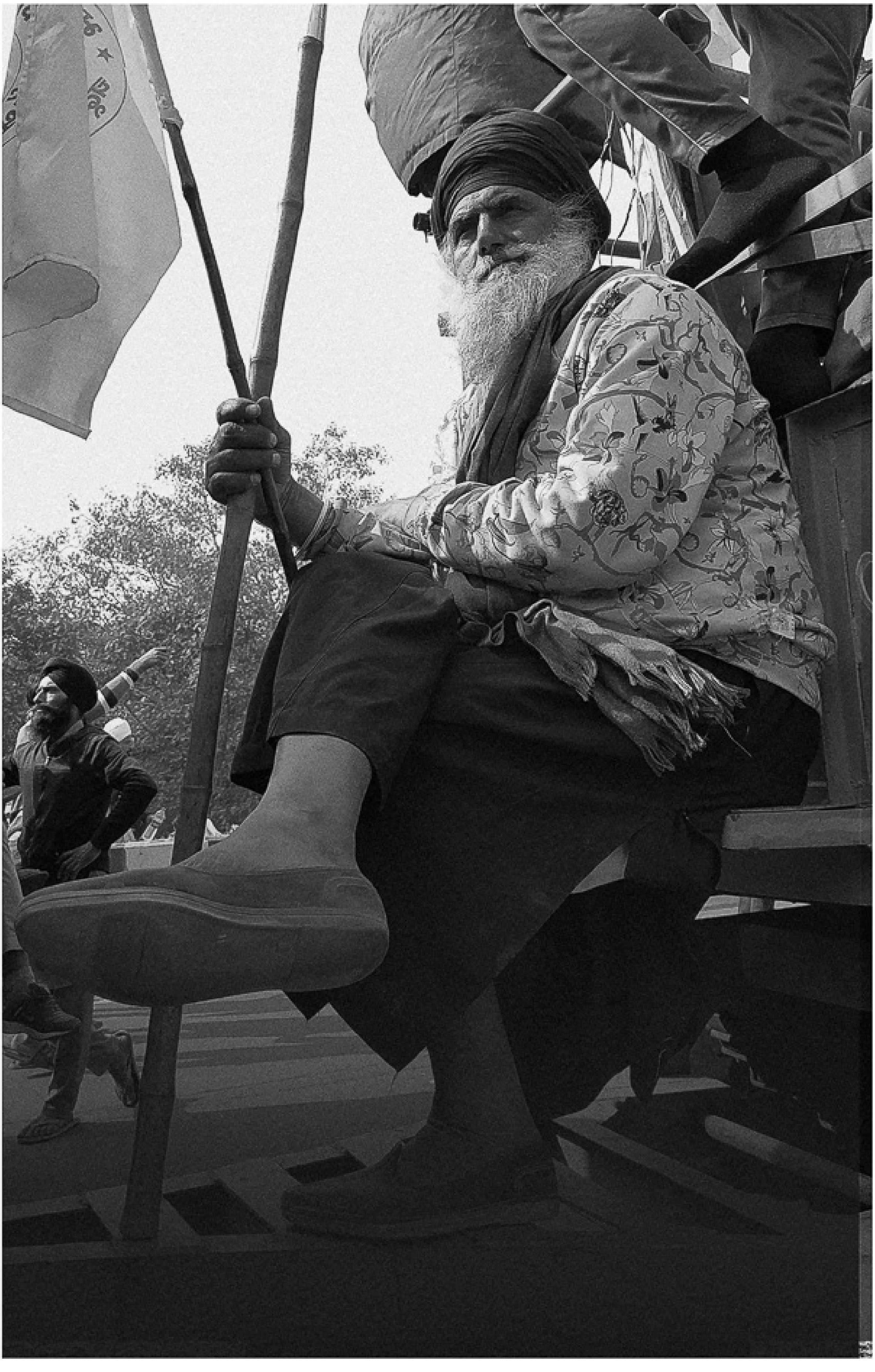

गणतंत्र दिवस के अवसर पर दिल्ली के जीटी करनाल बाइपास रोड पर होने वाले ट्रैक्टर मार्च के दौरान होने वाले प्रदर्शन में शामिल पंजाब के एक किसान, 26 जनवरी, 2021.

'भारत में किसान आंदोलन' शीर्षक से ट्राईकॉन्टिनेंटल रिसर्च सर्विसेज (नयी दिल्ली) ने एक शानदार डोज़ियर निकाला है, (डोज़ियर नं. 41, जून 2021), जो कि एक सीधा-सा सवाल उठाता है : भारतीय कृषि में ऐसा क्या हुआ कि किसान विद्रोह कर रहे हैं ? डोज़ियर का मुख्य उद्देश्य है कृषि संकट की पड़ताल करना, वो संकट जो कई प्रकार के लक्षणों के रूप में सामने आता है : कृषि की अनियमितता, जिसमें फ़सल कम होना भी शामिल है, जिसके परिणामस्वरूप कम कमाई या घाटा होता है, क़र्ज़ बढ़ता है, अल्परोज़गार बढ़ता है, संपत्ति ज़ब्त हो जाती है और किसान आत्महत्या करने को मजबूर हो जाते हैं। इस संकट की जड़ें बहुत गहरी हैं, जो 1991 से चली आरही नवउदारवादी काल की विफलताओं, 1947 के बाद से नये भारत की (ज़मींदार और बुर्जुआ वर्ग के सामने आत्मसमर्पण कर चुकीं) सरकारों की विफलताओं और ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की संरचना तक जमी हुई हैं।

किसानों के विद्रोह को मान्यता देना एक बात है ; वैसे भी दिल्ली के बॉर्डरों पर उनकी सक्रिय मौजूदगी को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है। लेकिन उनके विद्रोह के कारणों को समझना, यह समझना कि ये विद्रोह क्यों हो रहे हैं, और इतनी दृढ़ता से इस संकट का सामना क्यों कर रहे हैं, यह बिलकुल अलग बात है। यह डोज़ियर किसान यूनियनों के विचारों को आपके सामने रखता है कि कैसे मोदी सरकार भारत की अर्थव्यवस्था को अरबपति वर्ग, विशेष रूप से सरकार के क़रीबियों, यानी अडानी और अंबानी परिवारों के हाथ में दे देने पर तुली हुई है। जनवरी 2020 में, ऑक्सफ़ैम ने **बताया** था कि भारत के सबसे अमीर 1% लोगों के पास 95.3 करोड़ लोगों या सबसे ग़रीब 70% आबादी (जिनमें से ज़्यादातर ग्रामीण हैं) की कुल संपत्ति की तुलना में चार गुना से भी अधिक संपत्ति है।

महामारी के दौरान यह ग़ैर-बराबरी और बढ़ी है। मार्च से अक्टूबर 2020 के बीच, भारत के सबसे अमीर आदमी, मुकेश अंबानी की संपत्ति **दोगुनी** होकर 7830 करोड़ डॉलर तक पहुँच गई। चार दिनों में, अंबानी ने अपने 195,000 कर्मचारियों के कुल वेतन से अधिक पैसे बना लिए थे। इस दौरान मोदी सरकार ने राहत के लिए अपनी जनता को सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 0.8% हिस्सा **आवंटित** किया था। किसान -और उनके परिवार- इस खुलेआम वर्गीय युद्ध का जवाब अपने अडिग किसान कम्यून के साथ दे रहे हैं।

दिल्ली में सिंघु बॉर्डर पर पालकी साहब, सिखों के धार्मिक प्रतीक, को सजाती औरतें, 31 दिसंबर, 2020.

मोदी बड़े कॉरपोरेट घरानों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता से आसानी से पीछे नहीं हट सकते और किसान और खेतिहर मज़दूर अपनी ज़िंदगियाँ दाँव पर नहीं लगा सकते। इस टकराव से बाहर निकलने का कोई आसान रास्ता नहीं है। शहरी जनता का एक बड़ा तबक़ा अपने लिए भोजन उगाने वालों के प्रति सहानुभूति रखता है। बल प्रयोग के प्रयास –जिसमें महामारी को बहाने की तरह इस्तेमाल किया गया- भी विफल रहे हैं। क्या मोदी सरकार ज़्यादा बल प्रयोग का जोखिम उठाएगी और अगर वो ऐसा करती है तो क्या जनता इसे बर्दाश्त करेगी ? इस सवाल का कोई आसान जवाब नहीं है।

सोसाइटी फ़ॉर सोशल एंड इकोनॉमिक रिसर्च के विकास रावल और वैशाली बंसल द्वारा किए गए एक महत्वपूर्ण **अध्ययन** से पता चलता है कि भारतीय कृषि भारी आर्थिक असमानता के कारण बर्बाद हो रही है। ग्रामीण भारत के आधे से अधिक घर भूमिहीन हैं, जबकि कुछ ज़मींदारों के पास न केवल सबसे अच्छी भूमि है, बल्कि सबसे बड़ा रक़बा भी है। रावल और बंसल ने दिखाया है कि पिछले कुछ दशकों में भूमिहीनता और भूमि तक पहुँच की असमानता भी बढ़ी है और इसके कारण असुरक्षित किरायेदारी संबंध आम होते जा रहे हैं। उन्होंने दिखाया है कि भारतीय ग्रामीण इलाक़ों 'की ख़ासियत है कि वहाँ किसानों और ग्रामीण मज़दूरों के बड़े हिस्से घोर ग़रीबी में रहते हैं, जिनके पास अच्छी शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल सुविधाएँ नहीं पहुँच पाती हैं, और एक अच्छा जीवन जीने के लिए बुनियादी सुविधाओं का भी अभाव है'। यही कारण है कि वे विरोध कर रहे हैं। इसीलिए, रावल और बंसल का मानना है कि भूमि सुधार उनकी आज़ादी के लिए एक पूर्वशर्त है।

अश्वत्थ (यंग सोशलिस्ट आर्टिस्ट, भारत) किसानों के साथ मार्च, 2021.

इस न्यूज़लेटर में शामिल सभी तस्वीरें डोज़ियर से ली गईं हैं। ये तस्वीरें ट्राईकॉन्टिनेंटल के कला विभाग के सदस्य, विकास ठाकुर ने खींची हैं। अपनी तस्वीरों के बारे में विकास लिखते हैं कि, 'ये लोगों की तस्वीरें हैं जिनके नाम हैं, संघर्ष और आकांक्षाएँ हैं, और जीने का एक तरीक़ा है। ये एक वर्ग की तस्वीरें हैं। ये एक ऐतिहासिक विरोध की तस्वीरें हैं'।

स्नेह-सहित,

विजय।